

कामकाजी महिलाओं की समस्याएँ

Kamkaji Mahilao Ki Samasyaye

सामान्यतया-विशेषकर भारत में महिलाओं का स्थान कुछ वर्षों पहले तक घर-परिवार की सीमाओं तक ही सीमित समझा जाता रहा है। प्राचीन भारत में नारी के पूर्ण स्वतंत्र, सभी प्रकार के दबाओं से पूर्ण मुक्त रहने के विवरण अवश्य मिलते हैं। यह विवरण भी मिलता है कि जब वे अपनी पारिवारिक स्थिति के अनुसार हर प्रकार की शिक्षा भी क्योंकि तब शिक्षा प्रणाली आश्रम व्यवस्था पर आधारित थी। इस उन आश्रमों में पुरुषों के समान रहकर ही शिक्षा पाया करती थीं। गार्गी, मैत्रेयी, आरुन्धती जैसी महिलाओं के विवरण भी मिलते हैं कि वे मंत्र द्रष्टा थीं। अपने जमों में रहकर वहाँ की सारी व्यवस्था की, वहाँ रहने वाले स्त्री-पुरुष रूप न की यहाँ तक कि आश्रमवासी पशु-पक्षियों तक की भी देख-भाल किया करती थीं। महर्षि वाल्मीकि और कण्व के आश्रमों में भी (शकुन्तला तथा उस की सखियों के साथ) गौतमी जैसी नारी के विचार का विवरण मिलता है। इस प्रकार कहा जा सकता उस वैदिक काल में नारी सुरक्षित तो होती ही थी, हर प्रकार से स्वतंत्र भी हुआ हुआ करती थीं।

फिर भी ऐसा विवरण कहीं नहीं मिलता कि घर गृहस्थी को चलाने के लिए उन्हें कहीं काम करके कमाई भी करनी पड़ती थी। वैदिक काल के बाद बौद्धों के काल से वास्तविकताओं के कारण पेट पालने की खातिर उदाहरण मिलने लगना अलग बात है। मध्यकाल में आकर तो वह पूरी तरह से घर-परिवार की चारदीवारी में बन्द होकर रह गई थी, इतिहास के अध्ययन से यह स्पष्ट है। कहा जा सकता कि अंग्रेजों के आगमन के बाद, कुछ उन के और कुछ उनकी चलाई शिक्षा-दीक्षा के, कुछ यहाँ चलने वाले अनेक प्रकार के शैक्षणिक, सामाजिक और राजनीतिक आन्दोलनों के प्रभाव से भारतीय नारी को अपने घर-परिवार की चारदीवारी से बाहर कदम रखने का अवसर मिला। अभाव और महंगाई से दो-चार होने के लिए उसे कछ मात्रा में स्वतंत्रता प्राप्ति से पहले भी आर अधिकतर स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद कई तरह के काम-काज का भी सहारा लेना पड़ा। परिणावस्वरूप कामकाजी महिलाओं को आज तरह-तरह की समस्याओं में भी दो-चार होना पड़ रहा है।

महगाई के लगातार बढ़ती जाने घर-परिवार की आवश्यकताएँ पूरी करने, आर्थिक स्वतंत्रता पाकर स्वावलम्बी बनने की इच्छा तथा सब कुछ रहते हुए भी मात्र समय यापन लिए आज महिलाओं को अपने घरों-परिवारों से बाहर निकल कर नौकरियों नौकरियाँ या अन्य प्रकार के काम-काज करने पड़ रहे हैं। नर्स, अध्यापिका आदि के कुछ कार्य तो ऐसे हैं कि जिन्हें महिलाएँ ही कशलतापूर्वक कर सकती हैं। लेकिन अन्य सभी प्रकार रन में भी वे पुरुष समाज में किसी भी तरह कम साबित नहीं होती। वपुर उनके दैनिक काम-काज का औसत पुरुषों से कहीं अच्छा और अधिक रहता है, फिर ह पुरुषों के समान नहीं बल्कि हीन दृष्टि से देखा समझा जाता है। भारतीय विकासोन्मुख जीवन तथा समाज में योग्य से योग्यतम नारी के प्रति भी इस प्रकार का हीनता-बोध, इस प्रकार का दृष्टिकोण एक बहुत बड़ी समस्या है।

दूसरे यदि कामकाजी महिला कुँवारी है, तब सहकर्मी पुरुषों की ही नहीं राह चलतों की भी गिद्ध दृष्टियाँ उसे सारे-का-सारा और कच्चा निगल जाना चाहती हैं। सभी की अनुचित छींटाकशी तो उसे सुननी पड़ती है, अनचाहे स्पर्श और संकेत भी झेलने पड़ते हैं। कार्यालयों के अफसर और मालिक उसे समय से पहले आने और छुट्टी के बाद रुकने तक को कई बार-विशेषकर निजी प्रतिष्ठानों में बाध्य करते रहते हैं। साथ चाय पीने, लंच या डिनर करने, सिनेमा । देखने या सैर सपाटा करने के निमंत्रण तक उसे चाहे-अनचाहे झेलने पड़ते हैं। हर प्रकार से अच्छा कार्य करने पर भी उन्हें प्रशंसा नहीं, बल्कि दया और करुणा ही मिलती है। अपने घरों से दूर, गाँव-कस्बों की महिलाएँ आवास की उचित व्यवस्था न हो पाने के कारण कई बार योग्यता सम्पन्न होने पर भी घुट कर रह जाती हैं। साहस कर के यदि । वे किराये के मकानों या महिला होस्टलों में निवास करती हैं, तो वही पुरुष समाज की भद्दी आलोचनाएँ और नोच खाने को आतुर गिद्ध दृष्टियाँ। सचमुच, स्वतंत्र होकर भी मन-मस्तिष्क से अभी तक क्यों कि भारतीय पुरुष समाज स्वतंत्र नहीं हो पाया, काम-काजी और काम-काज करने की इच्छुक महिलाओं की यह एक बहुत बड़ी एवं प्रमुख समस्या है।

काम-काज करने वाली जो महिलाएँ विवाहित हुआ करती हैं, लाख कहती रहने पर भी उनकी समस्याएँ कम नहीं होतीं, यदि बच्चे हैं तब भी और नहीं हैं तब भी। पुरुष-प्रधान समाज होने के कारण हर हाल में उन का व्यक्तित्व दबा और घर-बाहर में बँटा रहता है। अगर पति अधिक कमाता है, तब तो वह अपने को महत्त्वपूर्ण समझता ही है, कम कमाने पर हीनता ग्रन्थी का शिकार होकर वह किसी भी तरह अपने आप को कम नहीं समझना

चाहता। ऐसी स्थिति में पति-पत्नी में तू-तू, मैं-मैं चलना तो साधारण बात होती ही है, घर में यदि सास नंद हैं, तो उन की बोलियों से भी बेचारी को छलनी होते रहना पड़ता है। दफ्तर या कार्य स्थल से लौट कर थकी-मांदी होने पर भी घर के छोटे-बड़े सभी कार्यों में कोल्हू के बैल की तरह जुट जाना पड़ता है, यही सब सुबह दफ्तर जाने से पहले भी हुआ करता है। इस प्रकार की विषम एवं अटपटी स्थितियों के दुष्परिणाम अक्सर सामने आते रहते हैं। पति यदि समझदार होते हैं, तो अपनी मां-बहनों को समझा-बुझा शान्ति बनाए रखने का प्रयास करते रहते हैं। जब नहीं निभ पाता, तो घर-परिवार का बँटवारा और विघटन हो जाता है। मानसिकता ऐसी है अभी तक कि इस के लिए दोषी बेचारी काम-काजी महिला को ही ठहराया जाता है। इसके विपरीत अहंवादी पतियों-परिवारजनों द्वारा अच्छा-खासा कमाने वालियों की हत्या तक कर देने की घटनाएँ सामने आती रहती हैं।

एक-दो बच्चे हो जाने पर स्वतंत्र रहने वाली कामकाजी महिला के लिए नई मुसीबत खड़ी हो जाती है। घर में यदि बच्चों की देख-भाल करने वाली कोई स्त्री, विश्वस्त आया आदि है, तब तो ठीक, नहीं तो बच्चों को 'क्रच' या 'डे केयर सेंटर' जैसी दुकानदारियों पर छोड़कर काम पर जाना पड़ता है। जहाँ मोटी रकम देने पर भी बच्चों को वह सब नहीं मिल पाता जो आवश्यक रूप से मिलना ही चाहिए। इस प्रकार के बच्चे क्रच के बाद ही होस्टलों में चले जाते हैं और तरह-तरह की बुराइयों का शिकार हो जाया करते हैं। यह सब हम अपने आस-पास के जीवन-समाज में देखते-सुनते रहते हैं। सो कहा जा विवाह करके बच्चे जनना भी काम-काजी महिला की एक बहुत बड़ी समस्या है। उन्हें कतई फुर्सत या आराम नहीं मिल पाता-छुट्टी वाले दिन भी नहीं। तब उसे समाप्त कर के कई-कई काम निबटाने होते हैं। ऐसी स्थितियों में यदि वह अस्वस्थ, चिड़चिड़ी या तुनक-मिजाज हो जाए, तो स्वाभाविक ही कहा जाएगा।

महिला हो या पुरुष, काम-काज करना किसी के लिए भी अनुचित या बुरा नहीं है। आवश्यकता इस बात की है कि समाज की मानसिकता, घर-परिवार और समूचे जीवन की परिस्थितियाँ ऐसी बनाई जाएँ, ऐसे उचित वातावरण का निर्माण किया जाए कि कामकाजी महिला भी पुरुष या शेष रुचि के समान व्यवहार और व्यवस्था पा सके, जिससे कुछ भी बोझ नहीं, बल्कि सहज लगे। एकदम सहज मानवीय और बस।